International Journal of Applied Research 2015; 1(13): 186-187

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(13): 186-187
www.allresearchjournal.com
Received: 17-10-2015
Accepted: 20-11-2015

डॉ. राजकुमार नाइक
प्रो0 स्नातकोत्तर हिंदी विभाग
दक्षिणी हिंदी प्रचार सभा, मद्रास।

वंदना रानी
पी0 एच0 डी0 शोधार्थी
दक्षिणी हिंदी प्रचार सभा, मद्रास।

डॉ. रमेश कुमार
हिंदी विभाग, जे0सी0डी0
विद्यापीठ सिरसा हरियाणा।

Correspondence
डॉ. रमेश कुमार
हिंदी विभाग, जे0 सी0 डी0
विद्यापीठ सिरसा हरियाणा।

यशपाल के उपन्यासों में व्यक्त लोक सांस्कृतिक आयाम

डॉ. राजकुमार नाइक, वंदना रानी, डॉ. रमेश कुमार

प्रस्तावना

यशपाल के उपन्यासों की संस्कृति की झलक अनेक रूपों में प्रदर्शित होती आई है। यहां का भिन्न रूप भौगोलिक धरातल, यहां के ऊंचे–ऊंचे रेतीले टीले जिन पर ऊंटों की सवारी, यहां के लोगों का वस्त्राभूषण, तीज–त्यौहार, लोकगीत, लोक नृत्य, लोक कथाएं, देवी–देवता, मंदिर, पूजा–पाठ, खान–पान, मेले–ठेले आदि में यहां की संस्कृति दिग्दर्शित होती है।

लोक–कलाओं के साथ–साथ सांस्कृतिक इतिहास में भारत व यशपाल के उपन्यासों की मूर्तिकला का अपना स्वतंत्र महत्व रहा है। इस कला से यहां की युग–युगान्तर की सांस्कृतिक प्रगति का साक्षात्कार होता है। इसमें ऐसा आभास होता है। जीवन संबंधी सभी विषयों को समावेशित कर शिल्पियों ने सामाजिक व सांस्कृतिक अध्ययन के खुले पन्ने हमारे समक्ष उपस्थित कर दिए हों।

हिंदी लोक साहित्य में यशपाल के उपन्यासों की संस्कृति को बहुत ही रूचिपूर्णता से देखा जा सकता है उसमें औचित्य भी है और अवधारणा भी। पारम्परिक दृष्टि से जहां भारत हरी–भरी हरियाली का प्रतीक है, वहीं यशपाल के उपन्यासों को ऐतिहासिक स्थलों का द्योतक माना जाता है। हमारे लोक जीवन और लोक संस्कृति के विभिन्न उपादानों में लोक–कथाओं, लोकगीतों, लोक नाट्यों, लोकगाहों को दोनों देशों के लोक साहित्य की तुलनात्मक पद्धति से देखा गया है, जिसमें तरह–तरह के क्रियाकलापों वृत–उत्सव, टोने–टोटके, गण्डा–ताबीज, देवी–देवता, भूत–प्रेत, शकुन–अपशकुन आदि के भाव विद्यमान रहते हैं। भारत व यशपाल के उपन्यासों के लोकतत्व अपने सांस्कृतिक स्वरूप की दृष्टि से समान भावों का प्रतीक रहे हैं।

इनके सभी उपन्यासों में लोक–तत्त्वों की व्याप्ति कहीं न कहीं निरूपित अवश्य हुई है। 'झूठा–सच' उपन्यास के जयदेव, तारा, शीलो, सोमनाथ, असद और 'मनुष्य के रूप' उपन्यास के मनोरमा, सोमा, भूशण, नीता, जोशी, धनसिंह, जगदीश सहाय और 'दादा–कॉमरेड' उपन्यास के यशोदा, शैल, हरीश, अमरनाथ, जे.आर.शुक्ला, ध्यानचंद आदि के माध्यम से लोक–तत्त्वों को व्यक्त किया है। विस्थापित वर्ग से जुड़े पात्रों के पास न छत है, न दीवार, मात्र टसकती हुई जिजीविशा है, जिसे वे ढोये जाने को विवश हैं। आंतरिक तौर पर विस्थापन के उत्तरदायी लोग जो वैसे ही दकियानूस विचारों के हैं वे स्वतंत्रताओं के हिमायती होने का ढोंग और सफल अभिनय करते हैं। यानी वे महसूस तो करते हैं कि स्वतंत्र होकर, मुक्त व्यवहारों में जीना एक उपलब्धि है, लेकिन उनके निर्दयी संस्कारों ने उन्हें इतनी गहराई से, जड़ों से बाँध रखा है कि वे जीवन में विस्थापित होकर उस स्वतंत्रता के खतरों को झेलते हुए नजर आते हैं। जैसे – 'झूठा–सच' उपन्यास में जयदेव, तारा परिवार से पारंपरिक संस्कृति के होते हुए भी स्वतंत्रता संग्राम में अपना योगदान देते हुए कई समस्याओं का सामना करते हैं पर स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् इनका स्वयं का दृष्टिकोण ही बदल जाता है। उर्मिला और कनक जो नारी वर्ग की पात्र हैं उनको भी कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। 'मनुष्य के रूप' उपन्यास में सोमा जो एक विधवा औरत है अपने ससुराल वालों के द्वारा तंग किए जाने पर धनसिंह ड्राइवर के साथ प्रेम के कारण घर से भाग जाती है। परंतु पुलिस द्वारा उनको पकड़ लिया जाता है और पुलिस इन दोनों पर अत्याचार करती है। सोमा कई समस्याओं को झेलते हुए जब आर्यसमाजी सज्जन लाला गोपीचंद सर्राफ के यहाँ जाती है तो घर की स्त्रियाँ उसका घर में रहना अच्छा नहीं मानती। तब लाला जी स्त्रियों को समझाते हुए कहते हैं कि जो हो यह लड़की हिन्दू है इसे घर में नहीं रखेंगे तो यह किसी मुसलमान के हाथ पड़ जायेगी, धर्म से जायेगी और जात से भी।[1] कभी हिंदू–मुसलमान तो कभी सिख–हिंदू साथ–साथ नहीं रह पाते। वे अपने उन्हीं आदर्शों में दुबक जाते हैं और उनके टूटने के डर से क्रोधित होते हैं, नैतिकता की दुहाई देने लगते हैं। यशपाल के उपन्यास जनमानस की ऐसी सीमाओं के खिलाफ खुले हुए रूप में सब कुछ कह देते हैं। उपन्यासकार बहुत ही तीखे – लेकिन सरल ढंग से विस्थापन की पीड़ा को एक छिपे हुए व्यंग्य की नोक से कुरेद देता है। स्वतंत्रता को दिखावटी तौर पर जीते रहने का दम्भ भरना ओर बात है और

उस विस्थापन के खतरों का सामना करना दूसरी बात है। जीने की शर्त पर अपनी उन भीतरी सीमाओं को तोड़कर उस स्वतंत्रता को प्राप्त करना निश्चित रूप से एक उपलब्धि है, लेकिन इसके लिए खोलों वाली, मुखौटों वाली भयानक जिन्दगी नहीं। जैसे सभी उपन्यासों के पात्र इसी मनःस्थिति से गुजरते हुए दिखाई देते हैं। इनके उपन्यासों में स्त्रियों की दुर्रावस्था और मनःस्थिति का बड़ा ही मार्मिक चित्रण पेश किया गया है। भीतर–बाहर दोनों स्तरों परस्वतंत्र होने की जिंदगी को ईमानदारी से जीना है। निरीह लोगों को घसीट–घसीटकर गोली मार दी गई, सम्पत्ति लूट ली गई। 'सुअर के बच्चे' कहकर 'कत्ले–आम' के फतवे विस्थापन के प्रमुख कारण बने। जैसे 'देशद्रोही' उपन्यास में डॉ0 खन्ना को एक गिरोह लूटपाट के साथ उठा ले जाता है तब डॉ0 खन्ना अपनी स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं – 'अन्जानी अंधेरी राह पर उसे घसीटे लिए जा रहे थे, आँखों पर कपड़ा बंधा था, दोनों हाथ पीठ पीछे जकड़े हुए, गले और कमर में दायें–बायें से फंदे पड़े थे। जो कुछ सुनाई पड़ रहा था, उससे वह समझ सका, उसके आगे–पीछे, अगल–बगल आदमियों के भारी–भारी चुस्त कदम पड़ रहे हैं। [2] उसके नंगे पाँव सुन्न हो चुके थे। पाँव के नीचे कंकड़ है या पत्थर, रेत है या धूल, समझ पाने लायक मस्तिष्क की अवस्था नहीं थी। किसी अज्ञात प्राणांतक भय की ओर वह जा रहा है, जो आशा और कल्पना के क्षितिज से परे था; जहाँ निश्चय था केवल मृत्यु का। ...किसी भी रूप में हो। [3]

लेखक 'झूठा–सच' उपन्यास के माध्यम से एक विद्रोह की त्रासद मनःस्थिति में स्वयं को पाता है। वस्तुतः उनकी मुक्त हंसी और खुले हुए व्यवहार से जनमानस अप्रत्यक्ष रूप से आक्रान्त होता है– वह अपने घर और दूसरे घर में तुलना करता है और परेशान होता है। अपने घर के परिवेष की सारी कमियां लोकमानस के दिमाग में ज्यादा उभर कर आती हैं और स्वयंमेव एक लम्बी साँस छूट जाती है। जैसे 'झूठा–सच' उपन्यास के खण्ड–2 में बंती की स्थिति दिखाई गई है। कनक के माध्यम से भी इस स्थिति का बड़ा मार्मिक चित्रण पेश किया गया है। 'दिव्या' उपन्यास में भी इस स्थिति का बड़ा मार्मिक चित्रण पेश किया गया है। दिव्या जो इस उपन्यास की मुख्य पात्र है वह अनेक पुरुषों के हाथ पड़ती है। पृथुसेन पर वह अटूट विश्वास करती थी और बाद में वह भी उसे छोड़ देता है जिसके कारण उसे अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। रामज्वाया अपने छोटे भाई रामलुभाया की नासमझी पर खेद प्रकट करते हुए और लोक–लाज से उसे समझाते हैं – ''तुम्हें खबर मिल गयी थी तो कान में तेल डाले बैठे रहे। तुम्हें अपने संबंध का भी कुछ ख्याल नहीं। उनका बेटा है तो तुम्हारा भी तो दामाद है। एक बार सुखलाल साहनी के यहाँ जाकर पूछताछ तो करनी चाहिए थी ....।'' [4]

सांस्कृतिक परंपरा के अनुसार मंगल वाद्य कर्णप्रिय नाथ के साथ मंगलाचरण प्रस्तुत किया जाता है। चारण तूर्यनाद करते हुए कला की देवी राजनर्तकी मल्लिका के सभास्थल में प्रवेश की घोषणा करते हैं, ''कला की अधिष्ठात्री नगर श्री राजर्नतकी देवी मल्लिका सभास्थल में पधार रही हैं।'' [5]

संस्कृति के जीवंत निरूपण के अनेक उदाहरण उपन्यास में बिखरे पड़े हैं। आतिथ्य सत्कार की तत्कालीन परंपरा का एक प्रसंग दृष्टव्य है – ''दिव्या दासी के हाथों में रजत आधार पर ताम्बूल और अर्घ्य लेकर आस्थानागर पहुँची ..... दिव्या ने अभ्यागत के सम्मुख बद्ध कर नासिका तक उठाकर नमस्कार के साथ स्वागत किया, 'आर्य, आस्यताम्।.... अर्घ्य ग्रहण करें'।'' [6]

सोमा ही उसको पहचानने से मना कर देती है जिस सोमा के लिए उसने यातनाएँ सही, जेल–यात्राएँ की, खून किये और अपनी पूरी जिंदगी खराब कर दी उसी के द्वारा न पहचाने जाने पर वह अत्यंत दुखी होता है और सोचता है कि मनुष्य के कितने रूप हो सकते हैं। [7]

'झूठा–सच' उपन्यास में तारा की तायी ने आकर तारा की माँ को समझाया – ''लड़की को कॉलेज में पढ़ाकर तुमने क्या लेना है ? लड़के के बराबर तो अभी पढ़ चुकी है उन लोगों के यहां जाकर इसे कौन स्कूल मास्टरी, मुंशीगिरी करनी है। क्या बच्चों को अंग्रेज़ी में लोरी देगी ? लड़की तो बहन पराई जमानत है। जब लड़का ही बी.ए. पास नहीं तो लड़की का बी.ए. पास करना क्या भला लगेगा ? व्यर्थ जग हँसाई होगी।'' [10], इस उपन्यास के माध्यम से यह दिखाया गया है कि पुरुष की तुलना में स्त्री की हीनता स्वाभाविक तो नहीं, परंतु आवश्यक बना दी गई है।

'अमिता' उपन्यास में दिखाया गया है कि युवक सामंत स्कन्द अपने सम्मान की रक्षा के लिए सौ पुरुषों का रक्त बहा देने में भी संकोच नहीं करता, परंतु देवता और राजा के सम्मुख उसकी ग्रीवा नहीं उठ सकती थी। वह भाग्य की इस विडंबना को सह जाने के लिए विवश था और मृत्यु से भी दारुण पीड़ा को अनुभव कर रहा था। [9]

संयुक्त–परिवार की प्रेम–भावना कितनी खोखली और अस्थिर है इसका उदाहरण 'देश–द्रोही' उपन्यास में भली–भाँति देखने को मिलता है– 'नए ढंग की पढ़ी–लिखी बहू के घर आने से बुआ और जेठानी ने परेशानी अनुभव की थी, परंतु डॉक्टर की ऊँची नौकरी पा जाने के उत्साह में वह भुला दी गई थी। घर में बहू के आने पर लक्ष्मी के चरण पड़ने के कारण वह लाड़ली बन गई थी। सास के आसन की अधिकारी बुआ और जेठानी उसे कुछ न कह सकती थी, परंतु कुलक्षणा विधवा हो जाने पर वह बहू बोझ बन गई। [10]

सामाजिक रूढ़ियों और मान्यताओं के नाम पर नारियों का शोषण होता रहा है। यशपाल ने अपने उपन्यास में ऐसी समस्याओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करके एक ओर जहाँ उस समस्या से परिचित कराया है वहीं दूसरी ओर उस समस्या से पीड़ित नारी को मुक्ति दिलाने का भी प्रयास किया है। यशपाल नारी को समानाधिकार देने के समर्थक हैं। उनके शब्दों में – ''आज हमारे समाज का आधा भाग यानी नारी समाज की कठिनाई और संघर्ष में अपने आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक दायित्वों को समझें, वे केवल कंधों पर बोझ न बनी रहें।''

निष्कर्ष

यशपाल के उपन्यासों के नारी पात्र अभिजात वर्ग और मध्यवर्ग से संबंधित हैं। ये सभी नारी पात्र जीवन में दोहरा संघर्ष करती हैं। एक और सभी नारियाँ सामाजिक परंपराओं, रूढ़ियों और मान्यताओं के प्रति विद्रोह करती हैं तो दूसरी और पूँजीवादी शोषक व्यवस्था को समाप्त करने के लिए राजनीतिक क्षेत्र में भी अहम् भूमिका निभाती हैं। 'दादा–कॉमरेड' उपन्यास की नायिका शैलबाला स्वतंत्र प्रकृति की नारी है। उसका दृष्टिकोण सामान्य नारियों से भिन्न है। वह शादी का विरोध करती है। शैल का नारी स्वातंत्र्य सामाजिक विचारों की अवहेलना के साथ ही सदाचार और व्यवहार की भी अपेक्षा करता है। शैल का आचरण, व्यवहार और मानसिकता भारतीय संस्कृति और सभ्यता से नितांत अलग है। उसका स्वच्छंद आचरण देखकर ऐसा लगता है मानो वह पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति में जी रही हो।

सदंर्भ

1. यशपाल, 'देशद्रोही', पृ0 50–51
2. यशपाल, 'देशद्रोही', पृ0 5
3. यशपाल, 'देशद्रोही', पृ0 5
4. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 39
5. यशपाल, 'दिव्या', पृ0 6
6. यशपाल, 'दिव्या', पृ0 15
7. यशपाल, 'मनुश्य के रूप', पृ0 215
8. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 40
9. यशपाल, 'झूठा–सच' (वतन और देश भाग–1), पृ0 20
10. यशपाल, 'देशद्रोही', पृ0 27